# मंगलाचरण

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्व साहूणं

मंगलं भगवान वीरो, मंगलं गौतम गणी
मंगलं कुंदकुंदार्यो, जैन धर्मोस्तु मंगलं

# अर्पण

कल्याणमूर्ति श्रीसदगुरुदेवको
जिन्होंने इस पामर पर अपार उपकार किया है। जो स्वयं
मोक्षमार्ग में विचर रहे हैं और अपनी दिव्य श्रुतधारा
द्वारा भरतभूमि के जीवों को सतत्‌रूप से मोक्षमार्ग
दर्शा रहे हैं जिनकी पवित्र वाणी में मोक्षमार्ग के
मूलरूप कल्याणमूर्ति सम्यग्दर्शन का माहात्म्य
निरन्तर बरस रहा है और जिनकी परम कृपा से
यह ग्रन्थ तैयार हुआ है – ऐसे कल्याणमूर्ति
सम्यग्दर्शन का स्वरूप समझानेवाले
कल्याणमूर्ति श्री सदगुरुदेव को यह
ग्रन्थ अत्यन्त भक्तिभाव से
अर्पण करता हूँ.....

– दासानुदास रामजी

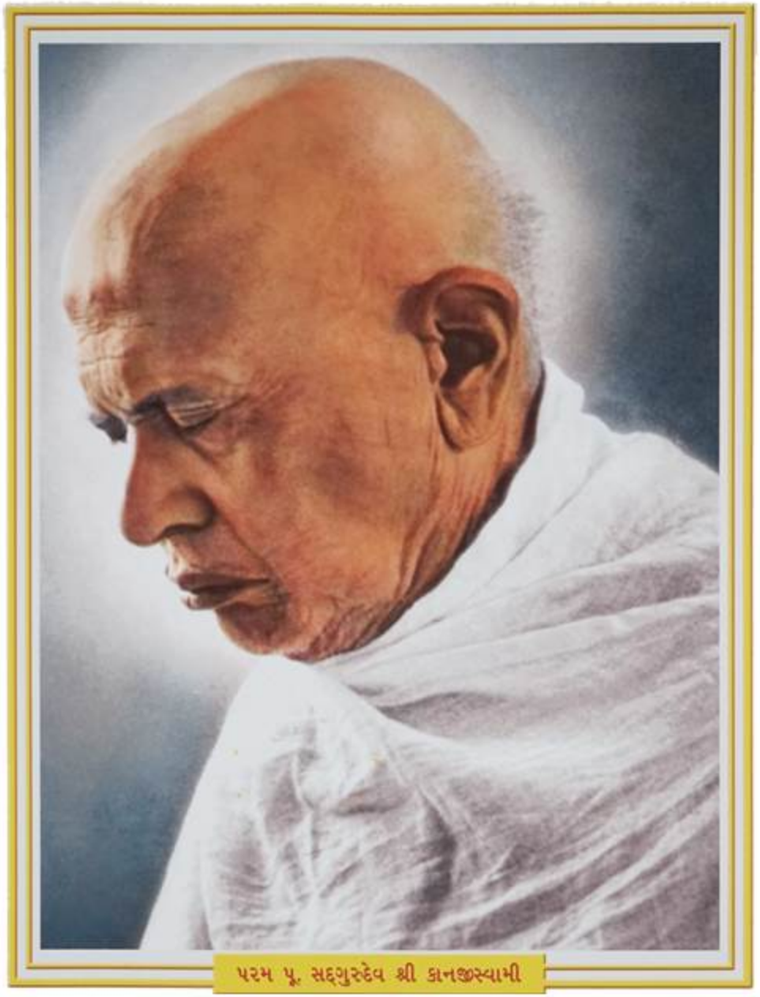

# तत्त्वार्थसूत्र

## अध्याय २, सूत्र १०

# संसारिणो मुक्ताश्च ॥ १० ॥

अर्थ - जीव [ संसारिण: ] संसारी [ च ] और [ मुक्ता: ] मुक्त-ऐसे दो प्रकार के हैं । कर्मसहित जीवों को संसारी और कर्मरहित जीवों को मुक्त कहते हैं।

# अध्याय २, सूत्र १० – जीव के भेद

- जीवों की वर्तमान दशा के ये भेद हैं । वे भेद, पर्यायदृष्टि से हैं। द्रव्यदृष्टि से सब जीव एक समान हैं ।
- पर्यायों के भेद दिखानेवाला व्यवहार, परमार्थ को समझाने के लिए कहा जाता है, उसे पकड़ रखने के लिए नहीं।
- इससे यह समझना चाहि कि पर्याय में चाहे जैसे भेद हों, तथापि त्रैकालिक श्रुवस्वरूप में कभी भेद नहीं होता। 'सर्व जीव हैं सिद्ध सम, जो समझे सो होय '।
- अपने शुद्ध स्वरूपसे भलीभाँति खिसक जाना (हट जाना), सो संसार है।
- जीव का संसार स्त्री, पुत्र, लक्ष्मी, मकान इत्यादि नहीं हैं, वे तो जगत् के स्वतन्त्र पदार्थ हैं । जीव उन पदार्थों में अपनेपन की कल्पना करके उन्हें इष्ट अनिष्ट मानता है, इत्यादि अशुद्धभाव को संसार कहते हैं ।

# अध्याय २, सूत्र १० – जीव के भेद

- संसारी और मुक्त जीवों में से संसारी जीव प्रधानता से उपयोगवान् है, और मुक्त जीव गौणरूप से उपयोगवान् है ।
- जीव की संसारी दशा होने का कारण आत्मस्वरूप सम्बन्धी भ्रम है; उस भ्रम को मिथ्यादर्शन कहते हैं। जीव अपनी भूल से अनादि काल से मिथ्यादृष्टि है; वह स्वतः अपनी पात्रता का विकास करके सत्समागम से सम्यग्दृष्टि होता है।
- उस भूलरूप मिथ्यादर्शन के कारण से जीव पाँच प्रकार के परिवर्तन किया करते हैं - संसार-चक्र चलता रहता है।
- परिवर्तन के पाँच भेद होते हैं -(१) द्रव्यपरिवर्तन, (२) क्षेत्रपरिवर्तन, (३) कालपरिवर्तन, (४) भवपरिवर्तन और (५) भावपरिवर्तन। परिवर्तन को संसरण अथवा परावर्तन भी कहते हैं।

# अध्याय २, सूत्र १० – जीव के भेद

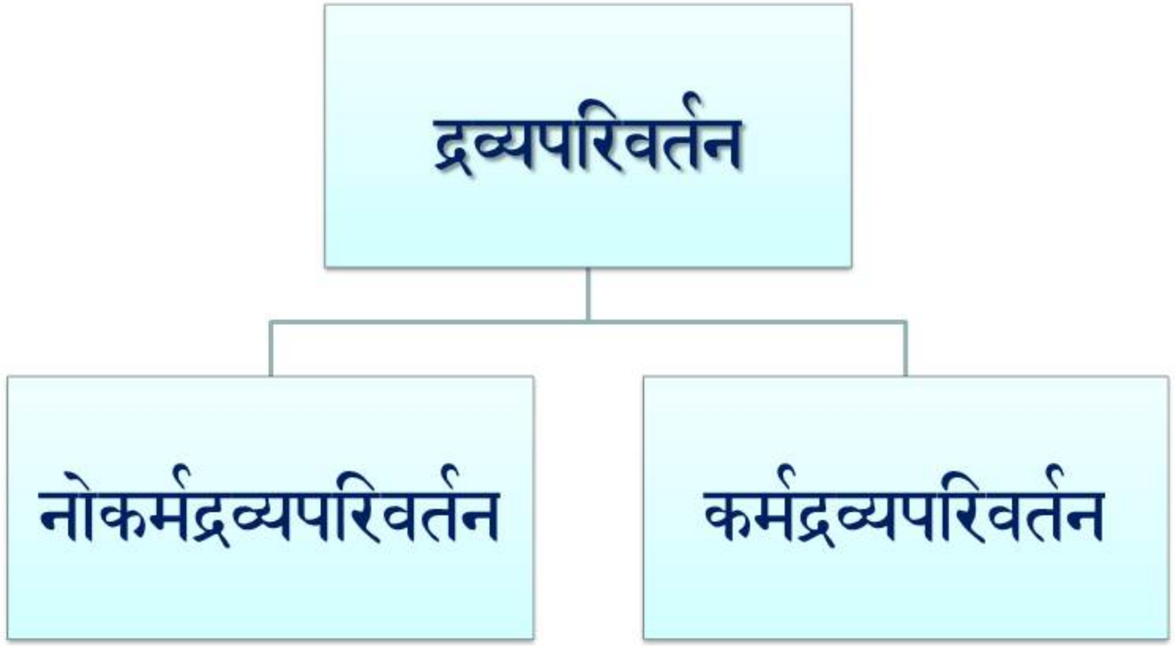


द्रव्य का अर्थ पुद्गल द्रव्य है । जीव का विकारी अवस्था में पुद्गल के साथ जो सम्बन्ध होता है, उसे द्रव्यपरिवर्तन कहते हैं ।

## नोकर्मद्रव्यपरिवर्तन

औदारिक, तैजस और कार्मण अथवा वैक्रियक, तैजस और कार्मण इन तीन शरीर और छह पर्याप्तकि योग्य जो पुद्गलस्कन्ध एक समय में एक जीव ने ग्रहण किए, वह जीव पुनः उसी प्रकार के स्निग्ध-रूक्ष स्पर्श, वर्ण, रस, गन्ध आदि में तथा तीव्र, मन्द या मध्यम भाववाले स्कन्धों को ग्रहण करता है, तब एक नोकर्मद्रव्यपरिवर्तन होता है। (बीच में जो अन्य नोकर्म का ग्रहण किया जाता है, उन्हें गणना में नहीं लिया जाता।) उसमें पुद्गलों की संख्या और जाति बराबर उसी प्रकार नोकर्मों की होनी चाहिए।

## कर्मद्रव्यपरिवर्तन

एक जीव ने एक समय में आठ प्रकार के कर्मस्वभाववाले जो पुद्गल ग्रहण किए थे, वैसे ही कर्मस्वभाववाले पुद्गलोंको पुन: ग्रहण करे, तब एक कर्मद्रव्यपरिवर्तन होता है। (बीच में उन भावों में अन्य प्रकार के दूसरे जो-जो रजकण ग्रहण किए जाते हैं, उन्हें गणना में नहीं लिया जाता) उन आठ प्रकारके कर्मपुद्गलों की संख्या और जाति बराबर उसी प्रकार के कर्मपुद्गलो की होनी चाहिए।

## स्पष्टीकरण

आज एक समय में शरीर धारण करते हुए नोकर्म और द्रव्यकर्म के पुद्गलोंका सम्बन्ध एक अज्ञानी जीव को हुआ, तत्पश्चात् नोकर्म और द्रव्यकर्मों का सम्बन्ध उस जीव के बदलता रहता है। इस प्रकार परिवर्तन होने पर वह जीव पुनः वैसे ही शरीर धारण करके, वैसे ही नोकर्म और द्रव्यकर्मों को प्राप्त करता है, तब एक द्रव्यपरिवर्तन पूरा किया कहलाता है। (नोकर्मद्रव्यपरिवर्तन और कर्मद्रव्यपरिवर्तन का काल एक सा ही होता है।)

# अध्याय २, सूत्र १० – जीव के भेद

| | Column 1 | Column 2 | Column 3 | Column 4 | Column 5 | Column 6 |
|---|---|---|---|---|---|---|
| Row 1 | 00+ | 00+ | 001 | 00+ | 00+ | 001 |
| Row 2 | ++0 | ++0 | ++1 | ++0 | ++0 | ++1 |
| Row 3 | ++1 | ++1 | ++0 | ++1 | ++1 | ++0 |
| Row 4 | 11+ | 11+ | 110 | 11+ | 11+ | 110 |

अगृहित = 0, मिश्र = +, गृहित = 1;

00 = अगृहित का ग्रहण अनंतबार

# जिनवाणी स्तुति

तीर्थंकरो जगतना जयवंत वर्तो,
ॐकारनाद जिननो जयवंत वर्तो;
जिननां समोसरण सौ जयवंत वर्तो,
ने तीर्थ चार जगमां जयवंत वर्तो।

अहो! उपकार जिनवरनो, कुंदनो द्वनि दिव्यनो;
जिन-कुंद-द्वनि आप्या, अहो! ते गुरु कहाननो।
जिन-कुंद-द्वनि आप्या, अहो! ते भगवती मातनो।